संतों को तेरे धन की वांछा नहीं

भाई ! दान का उपदेश तो संत तेरे हित के लिये देते हैं। संत तो वीतरागी हैं, उन्हें तेरे धन की वांछा नहीं है। वे तो परिग्रहरहित दिगम्बर संत वन-जंगल में बसनेवाले और चैतन्य के आनन्द में झूलनेवाले है। यह जीवन, यौवन, धन ह्न सब स्वप्नसमान क्षणभंगुर है, तो भी जो जीव सत्पात्र दान आदि में उसका उपयोग नहीं करते और लोभरूपी कुएँ की खोल में भरे हुये है; उनपर करुणा करके संतो ने यह उपदेश दिया है।

अन्तर में सम्यक्दृष्टिपूर्वक अन्य धर्मात्माओं के प्रति दान-बहुमान का भाव आवे तो उसमें स्वयं की धर्मप्रभावना पुष्ट होती है; इसलिये ऐसा कहा कि दान श्रावक को भवसमुद्र से तिरने के लिये जहाज के समान है। जिसे निजधर्म का प्रेम है, उसे अन्य धर्मात्माओं के प्रति भी प्रमोद, प्रेम और बहुमान आता है। धर्म धर्मीजीव के आधार से है; इसलिये जिसे धर्मीजीवों के प्रति प्रेम नहीं, जो मनुष्य साधर्मी-सज्जनों के प्रति शक्ति अनुसार वात्सल्य नहीं करता, उसकी आत्मा प्रबल पाप से ढ़ँकी हुई है। वह जीव धर्म से विमुख है। धर्म का अभिलाषी नहीं है। भव्य जीवों को साधर्मी-सज्जनों के साथ प्रीति अवश्य करनी चाहिये ह्न ऐसा पद्मनन्दी स्वामी ने उपासक संस्कार गाथा 36 में कहा है।

हे जीव ! लक्ष्मी आदि का प्रेम घटाकर धर्म का प्रेम बढ़ा। स्वयं को धर्म का उल्लास आवे तो धर्मप्रसंग में तन-मन-धन खर्च करने का भाव उछले बिना नहीं रहता; धर्मात्मा को देखते ही उसे प्रेम उमड़ता है। वह जगत को दिखाने के लिये दानादि नहीं करता, अपितु स्वयं को अन्तर में धर्म का प्रेम सहज ही उल्लसित होता इसलिये दानादि करता है। **ह्न श्रावकधर्मप्रकाश, पृष्ठ-64-65**

साधना चैनल पुनः आरंभ

विगत कुछ दिनों से जयपुर के आस-पास राजस्थान में साधना चैनल का प्रसारण नहीं हो पा रहा था; किन्तु अब यह पुनः आरंभ हो गया है। अतः प्रतिदिन रात्रि में 10.20 पर डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के प्रवचनों को सुनना न भूलें।

वीतराग-विज्ञान

वीतराग-विज्ञान ही, तीन लोक में सार।
वीतराग-विज्ञान का, घर-घर होय प्रसार।।

वर्ष : २४ २७२ अंक : ८

प्रवचनसार पद्यानुवाद

ज्ञेयतत्त्वप्रज्ञापन महाधिकार

अरि-मित्रजन धन्य-धान्य सुख-दुख देह कुछ भी ध्रुव नहीं।
इस जीव के ध्रुव एक ही उपयोगमय यह आतमा।।१९३।।
यह जान जो शुद्धातमा ध्यावें सदा परमातमा।
दुठ मोह की दुर्ग्रन्थि का भेदन करें वे आतमा।।१९४।।
मोहग्रन्थी राग-रुष तज सदा ही सुख-दुःख में।
समभाव हो वह श्रमण ही बस अखयसुख धारण करें।।१९५।।
आत्मध्याता श्रमण वह इन्द्रियविषय जो परिहरे।
स्वभावथित अवरुद्ध मन वह मोहमल का क्षय करे।।१९६।।
घन घातिकर्म विनाश कर प्रत्यक्ष जाने सभी को।
संदेहविरहित ज्ञेय ज्ञायक ध्यावते किस वस्तु को।।१९७।।
अतीन्द्रिय जिन अनिन्द्रिय अर सर्व बाधा रहित हैं।
चहुँ ओर से सुख-ज्ञान से समृद्ध ध्यावे परमसुख।।१९८।।
निर्वाण पाया इसी मग से श्रमण जिन जिनदेव ने।
निर्वाण अर निर्वाणमग को नमन बारंबार हो।।१९९।।
इसलिए इस विधि आतमा ज्ञायकस्वभावी जानकर।
निर्ममत्व में स्थित मैं सदा ही भाव ममता त्याग कर।।२००।।
सुशुद्धदर्शनज्ञानमय उपयोग अन्तरलीन जिन।
बाधारहित सुखसहित साधु सिद्ध को शत्-शत् नमन।।१४।।•

• आचार्य जयसेन की टीका में प्राप्त गाथा १४

ह्न डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

आत्मा ही आत्मा का गुरु

पूज्यपाद आचार्य श्री देवनन्दि के प्रसिद्ध ग्रन्थ इष्टोपदेश के ३४ वें श्लोक पर हुए आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजीस्वामी के अध्यात्मरसगर्भित प्रवचनों का संक्षिप्त सार यहाँ दिया जा रहा है। मूल श्लोक इसप्रकार है ह्न

स्वस्मिन्सदाभिलाषित्वादभीष्टज्ञापकत्वत: ।
स्वयं हित (तं) प्रयोक्तृत्वादात्मैव गुरुरात्मन: ।।३४।।

आत्मा अपने में सत् (कल्याण या मोक्षसुख) की अभिलाषा करता होने से, अभीष्ट (अपने इच्छित मोक्षसुख के उपाय) को बताता होने से और अपने हित (मोक्षसुख के उपाय) में अपने को जोड़ता होने से आत्मा ही आत्मा का गुरु है।

(गतांक से आगे...)

हे भाई ! इस जीव ने असत् कल्पनाओं में अनंतकाल व्यतीत किया; किन्तु इस जीव को रंचमात्र भी सुख नहीं मिला। स्वर्ग, कीर्ति, स्त्री-पुत्रादि, रुपया-पैसा, परद्रव्य इत्यादि में सुख नहीं है ह्न ऐसा जानकर जिसे सम्पूर्ण असत् सुखों की अभिलाषा छूट गई है और एक सत्सुख की ही अभिलाषा जागृत हुई है, वह जीव स्वयं ही स्वयं का गुरु है तथा उसे उपदेश देनेवाले गुरु निमित्त कहलाते है।

जिसे सत्सुख की अभिलाषा ही नहीं जगी, उसे गुरु लाख उपदेश दें तो भी सत्सुख की प्राप्ति नहीं होती।

जिसे संसार के असत् सुखों के प्रति वैराग्य जगा है और मन में निरंतर यह भावना चलती है कि मैं कौन हूँ और मुझे सुख कैसे प्राप्त होगा ?ह्न ऐसा पात्र जीव ही वास्तविक उपाय शोधकर उसमें प्रवर्तन करता है।

त्यागी-साधु होवे अथवा ब्रम्हचारी होवे; लेकिन मन में यह इच्छा हो कि मुझे प्रसिद्धि कैसे मिलेगी ? तो यह इच्छा संसारदु:ख का ही कारण है। गृहस्थी है, लडके बड़े होंगे, पैसा होगा तो हम सुखी होंगे; इसप्रकार जो जीव परद्रव्य में सुख खोजने की अभिलाषा करते है, वे मूढ़ हैं, उन्हें गुरु किस रीति से समझायेंगे ?

आगे ऐसा उदाहरण आयेगा कि यदि बगुले को समझा सकते है तो अज्ञानी जीव को भी समझा सकते है, लेकिन ऐसा होता नहीं है। पोपट (तोते) को तो समझा सकते है; किन्तु बगुले को नहीं समझा सकते।

जब आत्मा स्वयं स्वत:सिद्ध स्वतंत्रब्रह्ममोक्ष का अभिलाषी होता है, तब वह मोक्ष का उपाय खोजता है और स्वयं ही स्वयं को मोक्ष का उपाय बतानेवाला बन जाता है। हे आत्मा ! बाहर में सुख नहीं है ? सुख तो आत्मा में ही है, यह आत्मा ही अनंतसुख का सागर है।

यह जीव अनंतबार तीर्थंकरों के समवशरण में गया, 11 अंग 9 पूर्व का पाठी भी हुआ; किन्तु अन्तरंग का शल्य नहीं निकला, परद्रव्य के प्रति जो मिठास, ममत्वबुद्धि थी; वह नहीं निकली, इसलिये सत्सुख का उपाय कभी ढूँढा ही नहीं। ऐसे जीव के लिये तीर्थंकरदेव भी क्या करें ?

जब स्वयं जीव सत्सुख का अभिलाषी बनता है, तब सच्चे सुख का उपाय शोध लेता है तथा उसी को प्राप्त करने हेतु प्रवर्तन करता है। स्वयं ही स्व-स्वरूप में स्थिर होता है, कोई दूसरा उसे प्रवर्तन कराने में निमित्त नहीं है। सम्यक्श्रद्धा-ज्ञान-चारित्ररूप परिणमन करनेवाला आत्मा स्वयं ही है।

मोक्षाभिलाषी आत्मा स्वयं को समझाते हुये कहता है कि मोक्षसुख का यह उपाय महादुर्लभ है, उसकी प्राप्ति के लिये हे दुरात्मन् ! तूने आज तक कुछ भी प्रयत्न नहीं किया ! चैतन्य महासागर में डुबकी लगाने के लिये तू आज तक समय ही नहीं निकाल सका।

हे भाई ! कर्म ने जीव को हैरान कर दिया ह्न ऐसा हम कहते हैं; लेकिन इसमें कर्म का दोष नहीं है। यह जीव स्वयं ही परद्रव्य का कर्त्ता बनकर पर में सुखप्राप्ति की अभिलाषा करता है, परद्रव्य में सुख खोजता है; इसलिये स्वयं ही दु:खी होता है और यदि परद्रव्य का लक्ष्य छोडकर स्वयं, स्वयं का कर्त्ता होकर मोक्षसुख की अभिलाषा करे, मोक्ष का उपाय करे तो सुखी हो जावे। यह जीव अनादि से अपनी स्वाधीनता छोड़कर स्वयं ही पराधीन हो रहा है, इसे किसी ने पराधीन किया नहीं है। यह स्वाधीनपना अपने स्वयं में है, इसे कोई स्वाधीन बनाता नहीं है।

आठ-आठ वर्ष के राजकुमार दीक्षा लेकर चल निकलते हैं। अहाहा ! क्या उनका वैराग्य ? अभी तो गृहस्थी का प्रारंभ भी नहीं हुआ, संसार के भोगों को भोगा ही नहीं; लेकिन वैराग्य का भी पार नहीं। बाहर की अनुकूलता-प्रतिकूलता उन्हें रोक नहीं सकती। वे जानते हैं कि हमारा स्वभाव ही हमें अनुकूल है और हमारी विपरीतता ही हमें प्रतिकूल है।

मोक्षसुख के लिये सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र ही एक उपाय है, अन्य कोई उपाय नहीं है। कल्याण का अभिलाषी स्वयं ही स्वयं के कल्याण का उपाय जानता है और उसमें ही प्रवर्तन करता है; इसलिये आत्मा ही आत्मा का गुरु है।

निजगुरु निज को समझाता है कि अरे भाई ! चार गति के दु:खों से तुझे भय क्यों नहीं लगता ? तेरा सुख तुझ में है, उसे प्राप्त करने के लिये तू बाहर भटक रहा है। अब यहाँ से मुड़कर स्वभाव का सुख प्रगट कर ! इसप्रकार स्वयं स्वयं को हित की प्रेरणा देता है; अत: आत्मा ही आत्मा का गुरु है।

यह सुनकर शिष्य प्रश्न करता है कि महाराज ! आपने तो गुरु उपदेश का श्रवण, गुरु की सेवा, सत्संग आदि सब कुछ उड़ा दिया; फिर कोई किसी की सेवा क्यों करेगा ? गुरु के पास क्यों जायेगा और गुरु की सेवा-सत्संग भी क्यों करेगा; अत: आपको ऐसा नहीं कहना चाहिए; क्योंकि इससे आपत्ति आ सकती है, अपसिद्धान्त हो सकता है, सब स्वच्छंदी बन सकते हैं।

तब शिष्य को समझाते हुये गुरु आगामी गाथा कहते हैं ह्न

नाज्ञो विज्ञत्वमायाति विज्ञो नाज्ञत्वमृच्छति।
निमित्तमात्रमन्यस्तु गतेर्धर्मास्तिकायवत् ।।35।।

जो पुरुष अज्ञानी है अर्थात् तत्त्वज्ञान की उत्पत्ति के लिये अयोग्य है, वह विज्ञ (ज्ञानी) नहीं हो सकता और जो विशेष ज्ञानी है वह अज्ञानी नहीं हो सकता। जिसप्रकार जीव-पुद्गल की गति में धर्मास्तिकाय निमित्तमात्र है, उसीप्रकार अन्य पदार्थ भी निमित्तमात्र हैं।

तत्त्वज्ञान की उत्पत्ति में अयोग्य ऐसे अभव्यादि जीवों ने धर्माचार्यों से हजारों बार उपदेश ग्रहण किये, फिर भी वे उसे प्राप्त नहीं कर सके।

जिसे अन्तर में आत्मा को समझने की पात्रता ही नहीं है, परद्रव्यों से जुदा होने का वैराग्य ही नहीं है और स्वभाव के अस्ति की रुचि ही नहीं है, उसे गुरु क्या समझा सकते हैं ? जिसके पेट में विष हो, उसे दूध पिलाने पर भी विष नहीं उतरता; बल्कि दूध भी विष ही बन जाता है; उसीप्रकार जिसे अन्तर में परद्रव्य की रुचि पड़ी है, उसे आत्मा की रुचि नहीं हो सकती।

किसी भी कार्य की उत्पत्ति में स्वाभाविक गुणों का होना आवश्यक है, दूसरा कोई अनुकूल निमित्त उस कार्य को नहीं कर सकता। जिसप्रकार पोपट को पढ़ाने से वह पढ़ता है; क्योंकि उसमें पढ़ने की योग्यता है और बगुले में पढ़ने की स्वाभाविक योग्यता नहीं है; अत: अनेक प्रयत्न करने पर भी कोई बगुले को नहीं पढ़ा सकता।

जिसप्रकार स्वयं गति करते हुये जीव और पुद्गलों को धर्मद्रव्य गति कराने में निमित्त होता है; उसीप्रकार स्वयं अपनी पात्रता से जब जीव सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूप परिणमन करता है, तब गुरु निमित्त कहने में आते हैं। कार्य तो अन्तर के स्वाभाविक गुणों के पुरुषार्थपूर्वक होता है, निमित्त से नहीं।

इसप्रकार अपनी पात्रता के बिना मात्र गुरु उपदेश से धर्म नहीं परिणमता है, इसलिये अज्ञ-मूर्ख को कोई ज्ञानी नहीं बना सकता और जो तत्त्वज्ञानी है, उसे कोई अज्ञानी नहीं बना सकता।

अज्ञानी ऐसा कहता है कि ' मैं अपनी बातों से ज्ञानी को अज्ञानी बना सकता हूँ।' उसकी यह बात तीन काल में सत्य नहीं हो सकती; क्योंकि अपने पुरुषार्थ से जो बात श्रद्धा में बैठी हो उसे कोई करोड़ों उपाय करके भी भ्रमित नहीं करा सकता।

यही तो स्वतंत्रता का ढींढोरा पीटना है। तीनकाल में कोई ज्ञानी के ज्ञान को अज्ञान नहीं करा सकता और अज्ञान को ज्ञान नहीं करा सकता ।

पद्मनन्दी पंचविंशतिका में कहा है कि कहीं कोई भारी वज्रपात हो अथवा निंदा का प्रहार हो तो भय से घबराये हुए लोग अपना मार्ग छोड़कर यहाँ-वहाँ भटकने लगते है; किन्तु ऐसे वज्रपात में भी योगीजन योग (ध्यान) से चलायमान नहीं होते। सम्पूर्ण दुनिया डोलायमान हो जावे, लेकिन मुनिराज अपनी स्वभाव एकाग्रता से चलायमान नहीं होते; इसीलिये कोई भी ज्ञानी को अज्ञानी करने में समर्थ नहीं है। **(क्रमश:)**

कार्यस्वभावज्ञान और कारणस्वभावज्ञान

परमपूज्य सर्वश्रेष्ठ दिगम्बराचार्य कुन्दकुन्द के प्रसिद्ध परमागम नियमसार की 11-12 वीं गाथा पर हुए आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजीस्वामी के अध्यात्मरसगर्भित प्रवचनों का संक्षिप्त सार यहाँ दिया जा रहा है।

गाथायें मूलत: इसप्रकार है -

केवलमिंदियरहियं असहायं तं सहावणाणं ति ।
सण्णाणिदरवियप्पे विहावणाणं हवे दुविहं ।।11।।
सण्णाणं चउभेयं मदिसुदओही तहेव मणपज्जं ।
अण्णाणं तिवियप्पं मदियाई भेददो चेव ।।12।।

इन्द्रियरहित और असहाय होने से केवलज्ञान स्वभावज्ञान है। विभावज्ञान ह्न सम्यग्ज्ञान और मिथ्याज्ञान के भेद से दो प्रकार का है।

मति, श्रुत, अवधि तथा मन:पर्यय सम्यग्ज्ञानरूप है तथा कुमति, कुश्रुत और कुअवधि मिथ्याज्ञानरूप हैं।

(गतांक से आगे...)

आत्मा अनाथ है अर्थात् उसका कोई दूसरा नाथ नहीं और वह स्वयं मुक्तिसुन्दरी का नाथ है, अत: सनाथ है; इसप्रकार अनाथ और सनाथ दोनों बोल आत्मा पर लागू होते हैं, उसकी भावना करना मुक्ति का उपाय है।

सहज चिद्विलासरूप स्वभावअनन्तचतुष्टययुक्त आत्मा का अनुभव ही मुक्ति का कारण है। देखो तो सही ! मुनिराज को आत्मस्वभाव का वर्णन करते हुये, विशेषण भी ओछे पड़ते हैं। यहाँ आत्मा के त्रिकाली चतुष्टय की बात चल रही है। त्रिकाली श्रद्धा, त्रिकालीज्ञान, त्रिकाली सहजसुख और त्रिकाली चारित्र ह्न ऐसे स्वभाव चतुष्टयसहित आत्मा की भावना करना ही मुक्ति का उपाय है।

इसप्रकार संसाररूपी लता के मूलोच्छेदन में हँसियारूप इस उपन्यास से ब्रह्मोपदेश किया। इन बारह गाथाओं में संसार का मूल नाशक ब्रह्मोपदेश है। जिसप्रकार समयसार में बारह गाथायें मूलभूत हैं; उसीप्रकार यहाँ भी बारह गाथाओं

में ब्रह्मोपदेश किया। जैसा आत्मा कहा है, वैसे आत्मा की भावना करनेवाले को संसार का मूलोच्छेदन होकर मुक्ति प्राप्त होती है।

अब आगे 10 से 12 गाथाओं की टीका में समागत कलश काव्य कहते हैं ह्न

अथ सकलजिनोक्तज्ञानभेदं प्रबुद्ध्वा
परिहृतपरभाव: स्वस्वरूपे स्थितो य: ।
सपदि विशति यत्तच्चिच्चमत्कारमात्रं
स भवति परमश्रीकामिनीकामरूप: ।।17।।

जिनेन्द्र कथित समस्त ज्ञान के भेदों को जानकर जो पुरुष परभावों का परिहार करके निजस्वरूप में स्थिर रहता हुआ शीघ्र चित्चैतन्यचमत्कारमात्र तत्त्व में प्रवेश करता है, वह पुरुष परमश्रीरूपी कामिनी का वल्लभ होता है अर्थात् मुक्ति सुन्दरी का नाथ होता है।

भगवान परमेश्वर निज ज्ञानानन्द से भरपूर है। उसमें पर्याय को अन्तर्मुख करके एकाग्रता करनेवाला जीव मुक्ति प्राप्त करता है। जो जीव बाहर में भ्रमण करते हुये उपयोग को बदलकर चैतन्यचमत्कारमात्र आत्मस्वभाव में अन्तर्मुख होकर डुबकी लगाता है, वह जीव शीघ्र ही मुक्ति प्राप्त करता है।

इसप्रकार उपयोगों के प्रकारों का वर्णन करके उसका फल भी बतलाया। अत: हे जीव ! इन उपयोगों के भेदों को जानकर, परभावों को छोड़कर निज चैतन्य चमत्कार स्वभाव में शीघ्र प्रवेश करो ! यहाँ परभाव को छोड़ने के लिये कहा, सो व्यवहार का कथन है; परमार्थ से तो चैतन्य में स्थिर होने पर परभाव सहज ही छूट जाते हैं ह्न ऐसा जानकर चैतन्यचमत्कार स्वभाव में गहरा उतरकर जो जीव उसकी श्रद्धा-ज्ञान और एकाग्रता करता है, वह मुक्ति सुन्दरी का पति होता है।

इति निगदित भेदज्ञानमासाद्य भव्य:
परिहरतु समस्तं घोरसंसारमूलम् ।
सुकृतमसुकृतं वा दु:खमुच्चै: सुखं वा,
तत उपरि समग्रं शाश्वतं शं प्रयाति।।18।।

इसप्रकार कहे गये भेदज्ञान को पाकर भव्यजीव घोर संसार के मूलरूप समस्त

सुकृत या दुष्कृत को, सुख या दु:ख को अत्यन्त परिहरो। उससे ऊपर (अर्थात् उसे पार करलेने पर), जीव समग्र शाश्वत सुख को प्राप्त करता है।

जीव उपयोगमय है, उस उपयोग का वर्णन करके यथार्थ जीव की पहिचान करायी। इस पहिचान के माध्यम से भेदज्ञान करके हे भव्यजीव ! तुम घोर संसार के मूलरूप समस्त पुण्य-पाप का परिहार करो और त्रिकाली शुद्धचैतन्य का अवलम्बन करो। शुभव्यवहार धर्म का कारण नहीं; अपितु घोर संसार का कारण है। यहाँ व्यवहाररत्नत्रयरूप सुकृत अथवा शुभराग को भी घोर संसार का मूल कहा है, उसे अत्यन्त परिहरो और जिसे ज्ञानमूर्ति बतलाया है ह्न ऐसे त्रिकाली कारणपरमात्मा की भावना करो; क्योंकि वही सम्पूर्ण शाश्वत सुख का उपाय है। शुभ तथा अशुभ दोनों का उल्लंघन करके निज परमात्मा की भावना से ही शाश्वत सुख प्राप्त होता है, इसके अतिरिक्त अन्य कोई उपाय नहीं। अखण्ड चैतन्य का लक्ष्य ही प्रारंभिक उपाय है और आगे बढकर वही मोक्ष का कारण है।

शुद्धोपयोग का पिण्ड, परिपूर्ण, अखण्ड आत्मा ही मोक्ष का मूल है, इसके अतिरिक्त शुभ-अशुभभाव संसार के ही मूल हैं; मोक्ष के नहीं।

परिग्रहाग्रहं मुक्त्वा कृत्वोपेक्षां च विग्रहे।
निर्व्यग्रप्रायचिन्मात्रविग्रहं भावयेद बुध: ।।19।।

परिग्रह का ग्रहण छोड़कर तथा शरीर के प्रति उपेक्षा करके बुधपुरुष को अव्यग्रता (निराकुलता) से भरा हुआ चैतन्यमात्र जिसका शरीर है, उसे (आत्मा को) भाना चाहिये।

उपयोगमय आत्मा कहा, उसकी पकड़ करते ही पर की पकड़ छूट जाती है; अत: चैतन्य के अतिरिक्त समस्त परद्रव्यों का ग्रहण छोड़कर तथा शरीर के प्रति भी उपेक्षा करके, उसका भी लक्ष्य छोड़कर ज्ञानियों को अव्यग्रता से भरपूर चैतन्यमात्र की भावना करनी चाहिये।

'**बाहर में शरीरादि का क्या होगा ?**' ऐसी व्यग्रता करना आत्मा का स्वरूप नहीं है; क्योंकि आत्मा का विग्रह तो चिन्मात्र है अर्थात् चैतन्यमात्र शरीर है ह्न ऐसे आत्मा की भावना करना।

शरीर का कल क्या होगा ?ह्न ऐसी चिन्ता ही व्यग्रता है। व्यग्रता करना चैतन्य का स्वरूप नहीं है तथा व्यग्रता करने से पर में कोई फेर-फार भी नहीं हो सकता; अत: व्यग्रतारहित चिदानन्दपूर्ण भगवान की भावना करनी चाहिये।

मुख्यरूप से यह मुनि की बात है, इसलिये कहा है कि बाह्य में परिग्रह छोड़कर तथा देह की भी उपेक्षा करके शुद्धज्ञान शरीरी चैतन्य आत्मा की भावना करो। इस भावना में ही निश्चय सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र तीनों आ जाते हैं।

भेदज्ञान से चैतन्य की भावना करने पर क्या फल होता है, यह बतलाकर इसकी महिमा और मंगल करते हैं।

शस्ताशस्तसमस्तरागविलयान्मोहस्य निर्मूलनाद्
द्वेषाम्भ: परिपूर्णमानसघटप्रध्वंसनात् पावनम्।
ज्ञानज्योतिरनुत्तमं निरुपधि प्रव्यक्ति नित्योदितं
भेदज्ञानमहीजसत्फलमिदं वन्द्यं जगन्मंगलम् ।।20।।

मोह को निर्मूल करने से, प्रशस्त-अप्रशस्त रूप समस्त राग का विलय करने से तथा द्वेषरूपी जल से भरे हुये मनरूपी घड़े का नाश करने से, पवित्र अनुत्तम (सर्वश्रेष्ठ), निरुपधि और नित्योदित (सदा प्रकाशमान) ज्ञानज्योति प्रकट होती है। भेदज्ञानरूपी वृक्ष का यह सत्फल वन्द्य है, जगत को मंगलरूप है।

चैतन्य की भावना से मोह का नाश हो जाता है तथा समस्त शुभाशुभ राग का नाश हो जाता है। स्वभाव की ओर वर्तनेवाली अरुचि को द्वेषरूपी जल से भरा हुआ घड़ा कहा है, उसका भी चैतन्य की भावना से नाश हो जाता है; इसप्रकार त्रिकाली शुद्ध चैतन्यमूर्ति स्वभाव की भावना करने से मोह और राग-द्वेष का नाश होता है और पवित्र, अनुत्तम, उपाधिरहित नित्यप्रकाशमान ज्ञानज्योति प्रकट होती है।

ऐसी ज्ञानज्योति प्रकट होना भेदज्ञानरूपी वृक्ष का सुन्दर फल है। भेदज्ञानरूपी वृक्ष का यह सत्फल वन्द्य है तथा जगत को मंगलरूप है। देखो ! अखण्ड ज्ञानज्योति प्रकट होने का कारण पर से भिन्नत्व की भावना है। पर से भिन्न आत्मा का भेदज्ञान होने पर मोक्ष का बीजारोपण हो जाता है; पश्चात् उसमें से वृक्ष फलित होने पर केवलज्ञानरूपी फल प्रकट होता है ह्न वह सत्फल जगत में वन्द्य है और वही मंगलरूप है। वही सम्पदादायक एवं आपदाविनाशक मंगल है।

मोक्षे मोक्षे जयति सहजज्ञानमानन्दतानं
निर्व्याबाधं स्फुटितसहजावस्थमन्तमखं च।
लीनं स्वस्मिन्सहजविलसच्चिच्चमत्कारमात्रे
स्वस्य ज्योति: प्रतिहततमोवृत्ति नित्याभिरामम् ।।21।।

आनन्द में जिसका विस्तार है, जो अव्याबाध (बाधारहित) है, जिसकी सहज दशा विकसित हो गई है, जो अन्तर्मुख है, जो अपने में सहज विलसते (खेलते, परिणमते) चित्चमत्कारमात्र में लीन हैं, जिसने निजज्योति से तमोवृत्ति (अन्धकारदशा , अज्ञान परिणति) को नष्ट किया है और जो नित्य अभिराम (सदा सुन्दर) है ह्न ऐसा सहजज्ञान सम्पूर्ण मोक्ष में जयवन्त वर्तता है।

टीकाकार कहते हैं कि सहजज्ञान से प्रकट हुई स्वाभाविकदशा मोक्ष में जयवन्त वर्तती है। वहाँ सम्पूर्ण राग-द्वेष-मोह नष्ट होकर परिपूर्ण आनन्द प्रकट हो गया है। वह आनंद अव्याबाध अर्थात् बाधारहित है; क्योंकि उसकी सहज अवस्था विकसित हो गई है। शक्तिरूप से तो त्रिकाली कारणस्वभावज्ञान था ही, उसमें से ही यह सहज अवस्था विकसित हुई है अर्थात् केवलज्ञान हुआ है। जो अन्तर्मुख है, अपने सहज विलसते (परिणमते) चैतन्यचमत्कार में लीन है तथा जिसने अपनी प्रकट हुई ज्योति से अज्ञान अन्धकार का नाश किया है और जो नित्य अभिराम(सदासुन्दर) है ह्न ऐसा सहजज्ञान अपनी प्रकटी हुई अवस्था सहित मोक्ष में जयवन्त वर्तता है।

त्रिकाली सहजज्ञान था, उसकी पूर्णअवस्था मोक्ष में विकसित हो गई है ह्न ऐसा ज्ञान मोक्ष में जयवन्तवर्तता है। ऐसे सहजज्ञानस्वभाव की भावना करने जैसी है। उसकी भावना से केवलज्ञान और मोक्षदशा प्रकट हो जाती है।

सहजज्ञानसाम्राज्यसर्वस्वं शुद्धचिन्मयम् ।
ममात्मानमयं ज्ञात्वा निर्विकल्पो भवाम्यहम् ।।22।।

सहजज्ञानरूपी साम्राज्य जिसका सर्वस्व है ह्न ऐसे शुद्ध चैतन्यमय अपने आत्मा को जानकर, मैं यह निर्विकल्प होऊँ।

सहजज्ञानरूपी साम्राज्य ही जिसका सर्वस्व है, ऐसे शुद्ध चैतन्यमय अपने आत्मा को जानकर उसमें लीनता होने पर निर्विकल्पता होती है। इस भाँति सहजज्ञानमय शुद्धात्मा को जानने से निर्विकल्पता होती है ह्न ऐसा कहा है। ●

वाणी का संयम बहुत जरूरी

(दिनांक 16 से 21 नवम्बर, 05 तक किशनगढ़ (राज.) में हुये पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव में केवलज्ञान कल्याणक के अवसर पर सामाजिक सद्भावना एवं शांति के लिये डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल द्वारा दिये गये उद्बोधन का महत्त्वपूर्ण मार्मिक अंश यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है। ह्न प्रबन्ध सम्पादक)

पंचकल्याणक महोत्सव समापन की ओर है। इस अवसर पर मैं दो-तीन मार्मिक बातें आपसे कहना चाहता हूँ, इसके पश्चात् केवलज्ञान कल्याणक की चर्चा करूँगा।

पहली बात तो यह है कि हम अपनी पीठ को कितनी ही क्यों न ठोकें, लेकिन हमें यह नहीं भूलना चाहिये कि पूज्य गुरुदेवश्री का पुण्य प्रताप अभी जीवित है; इसीलिये हमें यह सफलता मिली है।

हम तो उन आचार्यों के शिष्य हैं जो समयसार जैसा ग्रन्थ और आत्मख्याति जैसी टीका लिखकर भी अन्त में लिखते हैं कि मैंने कुछ नहीं किया। अक्षर मिलकर शब्द बन गये, शब्द मिलकर वाक्य बन गये और वाक्य मिलकर यह पवित्र शास्त्र बन गया। अमृतचन्द्र ने कुछ किया है ह्न ऐसा मानकर हे शिष्य ! तुम मोह में मत नाचो !

हमें बहुत प्रसन्नता है कि आज भगवान नेमिनाथ को केवलज्ञान प्रकट हो गया है । हमारा यह पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव बहुत शंकाओं और आशंकाओं के बीच अधिकतम सफलताओं के साथ सम्पन्न होने जा रहा है।

इस प्रसंग पर मैं एक बात कहना चाहता हूँ कि जब किसी पेड़ पर फल लगते हैं अर्थात् वह पेड़ सफल होता है तो नम जाता है, नीचे झुक जाता है। यदि ये हमारा पंचकल्याणक महोत्सव सफल हुआ है तो हमारे लोगों को भी अपने को विनम्र बनाना चाहिये। उसमें यह नहीं समझना चाहिये कि हम विनम्र बने तो हमारी गर्दन नीची हो गई ।

अभी पाँच मिनिट पहले एक बच्ची ने एक गीत (मुक्तक) सुनाया । कोई ज्यादा अच्छी बात तो नहीं कही, पर आप सबने भी तालियाँ पीट दी, मुझे बहुत दुख हुआ।

ऐसे मंगल अवसर पर सहयोग करनेवालों को याद किया जाता है या असहयोग करनेवालों को ? मेरे कहने का आशय यह है कि हमारे जीवन में विनम्रता आनी चाहिये; क्योंकि हम सफल हुये हैं।

हम भगवान के मंदिर में भगवान की प्रतिमा विराजमान कर रहे हैं, हमारे हृदय मंदिर में भी भगवान विराजमान हुये हैं, भगवान आत्मा विराजमान हुआ है।

जहाँ हृदय में भगवान विराजमान हुये हों, वह हृदय कैसा होना चाहिये ? मैं आपसे

इसकी कल्पना करने की अपेक्षा रखता हूँ।

सामाजिक दृष्टि से समाज सर्वोच्च है; उससे कटकर रहने की हम कल्पना भी नहीं कर सकते, करना भी नहीं चाहिये। हमें हर बात को नेगेटिवरूप में नहीं देखना चाहिये।

जैसा कि कल समाज में दिगम्बर तेरापंथी-बीसपंथी का जो सामूहिक भोज हुआ, उसमें उन लोगों को भी आमंत्रण दिया गया, जिनको पहले जात-बाहर करने की धमकियाँ दी गई थी। इसलिये समझना चाहिये कि हमारे इस पवित्र यज्ञ से उनके हृदय में भी कुछ अच्छे भाव जगे हैं, उसका यह परिणाम है।

हमें इस बात को राजनीति नहीं समझकर पवित्र हृदय से स्वीकार करना चाहिये। हमारे बारे में समाज को जो भी शिकायतें हैं, जिनके कारण ये थोडी-बहुत तकलीफें खड़ी होती हैं ह्न ऐसी बातों से हमे बचना चाहिये; किन्तु जो तत्त्वज्ञान की मान्यता है, उसे तो हम किसी भी कीमत पर नहीं छोड़ सकते हैं। चाहे हमें सब कुछ छोड़ना पड़े।

लेकिन मैं यह कहना चाहता हूँ कि हम अपनी बात को विनम्रता पूर्वक भी बड़ी दृढता के साथ रख सकते हैं, उसके लिये कठोर शब्दों की कोई आवश्यकता नहीं है। इससे जो अनावश्यक तकलीफें खड़ी होती हैं; वे खड़ी नहीं होगी। पर जो होनी है, वो तो होकर ही रहेगी।

हम अलग रहकर भी समाज के अंग हैं और समाज में रहकर भी अलग हैं। अलग इसलिये हैं कि हम निर्विघ्न अपना पूजा-पाठ स्वाध्याय करना चाहते हैं; क्योंकि हमें दूसरी जगह ये कार्य निर्विघ्न करने का अवसर प्राप्त नहीं होता। हम एक साथ इसलिये हैं कि हमारा सम्मेदशिखर एक साथ है, हमारा गिरनार एक साथ है, हमारे भगवान महावीर एक साथ हैं ह्न उनको तो हम नहीं बांट सकेंगे।

यह हमारी मजबूरी समझों या जो कुछ भी है, हम न अलग रह सकते हैं न एक साथ रह सकते हैं। हमको एक साथ रहकर भी अलग रहना सीखना होगा और अलग रहकर भी एक साथ रहना सीखना होगा।

प्रदीपजी चौधरी ने इतना बढिया काम किया है, उन्हें आप लोगों ने भरपूर शाबाशी भी दी है और वह काम शाबाशी के काबिल है भी; लेकिन फिर भी प्रदीपजी से और बेटी कुसुम से मैं यह कहना चाहता हूँ कि अब अपने मुंह से एक भी ऐसा शब्द नहीं निकालना, जो हमारी इस प्रतिष्ठा की गरिमा को कम करे।

पूरा दिगम्बर जैन समाज अपना है और अपना रहेगा। अब आपको क्या तकलीफ है; आपका मंदिर है, पूजा करिये, पाठ करिये, स्वाध्याय करिये, चर्चा करिये; पर इसमें कठोर शब्दों की क्या जरूरत है ? **(शेष पृष्ठ 27 पर ...)**

ज्ञान गोष्ठी

सायंकालीन तत्त्वचर्चा के समय विभिन्न मुमुक्षुओं द्वारा
पूज्य स्वामीजी से पूछे गये प्रश्न और स्वामीजी द्वारा दिये गये उत्तर

प्रश्न : एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं करता ह्न इस सिद्धान्त में यह बात तो समझ में आती है कि एक जीव दूसरे जीव का कुछ नहीं करता; परन्तु एक परमाणु दूसरे परमाणु का कुछ नहीं करता ह्न यह बात जँचती नहीं।

उत्तर : एक परमाणु स्वतंत्र है, वह भी स्वयं कर्त्ता होकर अपने कार्य को करता है, दूसरे परमाणु का उसमें अत्यंत अभाव है। यदि इससे आगे बढ़कर थोड़ा सूक्ष्म विचार करें तो पुद्गल द्रव्य की पर्याय स्वयं से स्वतंत्र होती है, द्रव्य भी उसका कारण नहीं है। भाई ! वीतराग की बात बहुत सूक्ष्म है।

प्रश्न : आप कहते हो कि शरीर तेरा नहीं और राग भी तेरा नहीं; परन्तु हमें तो रात-दिन इन दोनों से ही काम पड़ता है, अब क्या करें ?

उत्तर : शरीर तो अपने कारण से षट्कारकरूप स्वतंत्र परिणमन करता है और उसीप्रकार राग भी अपने कारण ही षट्कारक से परिणमन करता है। तू तो इन दोनों का मात्र ज्ञायक है। एकसमय में पर्याय षट्कारक से स्वतंत्र परिणमती है ह्न द्रव्य के कारण नहीं तथा पूर्व पर्याय के कारण उत्तर पर्याय परिणमती हो ह्न ऐसा भी नहीं है। प्रत्येक पदार्थ की पर्याय प्रतिसमय षट्कारक से स्वतंत्रपने ही परिणमती है ह्न यह वस्तुस्थिति है। भाई ! तेरा तत्त्व तो परिपूर्ण ज्ञायकभाव से परिपूर्ण है, वह जानने के अतिरिक्त और क्या करे ?

प्रश्न : परद्रव्य का कार्य भले ही नहीं कर सकते; किन्तु अनासक्तिभाव से पर को सुखी करे ह्न अनुकूलता प्रदान करे तो ?

उत्तर : 'पर को मैं सुखी कर सकता हूँ, अनुकूलता प्रदान कर सकता हूँ' ह्न यह दृष्टि ही मिथ्यात्वरूप भ्रम है। 'पर को सुखी कर सकूँ, पर को लाभ करा दूँ' ह्न यह कर्त्ताबुद्धि का अभिमान है; अनासक्ति नहीं।

प्रश्न : पदार्थों की स्वतंत्रता समझने से क्या लाभ है ?

उत्तर : पदार्थों की स्वतंत्रता समझने से अपने परिणाम का कर्त्ता स्वयं है ह्न अन्य नहीं है, इसप्रकार समझने से पर से विमुख होकर अपने में परिणाम लगाकर आत्मा का अनुभव करना ही लाभ है। अपने ज्ञाता-दृष्टा स्वभाव को जानकर मात्र देखनेवाला-जाननेवाला बना रहे, तो चौरासी के अवतार में भटकना मिटे और मुक्ति प्राप्त हो ह्न यह लाभ है। ●

(पृष्ठ 16 का शेष ... वाणी का संयम)

मेरे हृदय में यह विकल्प इसलिये उठा है; क्योंकि मैं बहुत दिनों से ऐसी बातें सुनता आ रहा हूँ कि यदि ऐसा नहीं होता तो ऐसा हो जाता। आपके कानों में भी ऐसी बातें आई होगी। अब जो हो गया, उसकी मैं बात नहीं करता; लेकिन कल से ऐसा नहीं होना चाहिये। सामनेवाले भले ही भाषा समिति छोड दें; किन्तु हमें भाषा समिति नहीं छोडना चाहिये।

मैं सच्चे दिल से आपसे यह आग्रह करना चाहता हूँ कि आपकी-हमारी वाणी बहुत मीठी होनी चाहिये, बहुत प्यारी होनी चाहिये। विनम्रभाषा में भी दृढता पूर्वक इंकार किया जा सकता है, अपने सिद्धान्तों पर अडिग रहा जा सकता है।

हमारे अस्तित्व के लिये हमें पंचपरमेष्ठी की शरण के अतिरिक्त किसी की भी शरण की आवश्यकता नहीं है। ऐसा होने पर भी हमें सबसे हिल-मिलकर रहना चाहिये। जब हम अजैनियों से मिलकर रह सकते हैं; मुसलमान, ईसाई, हिन्दू भाईयों से मिलकर रह सकते हैं तो क्या अपने जैन भाईयों से मिलकर नहीं रह सकते ? सामनेवालों की तरफ से कुछ भी हो, हम ठण्डे रहेंगे तो सब मामला बहुत जल्दी ठण्डा हो जायेगा।

पुखराज पहाड़िया ने कहा कि सब २१ नवम्बर तक का झगड़ा है, २१ तारीख के बाद सब ठण्डा हो जायेगा। मेरे से उनकी पकड़ ज्यादा गहरी लगती है। मैं तो समझता था कि माहौल को ठण्डा होने में महिने-दो महिने लग जायेंगे; जबकि उन्हें तो २१ तारिख के बाद ही मामला ठण्डा होने का भरोसा था।

लेकिन हम दोनों ही फेल हो गये और २१ तारिख से पहले ही मामला ठण्डा हो गया। इसलिये अब हमें पुरानी सब बातें भूलकर विनम्रता एवं समताभाव का रास्ता अपनाते हुये अपने जीवन का कल्याण करना चाहिये।

बस इतनी ही बात मैं आप सबसे कहना चाहता हूँ। ●

पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव सानन्द सम्पन्न

1. कोटा (राज.) : श्री दिगम्बर जैन मुमुक्षु मण्डल कोटा के तत्त्वावधान एवं श्री कुन्दकुन्द कहान दि. जैन '**मुमुक्षु आश्रम ट्रस्ट**' कोटा के आयोजकत्व में दिनांक 4 से 10 फरवरी, 2006 तक श्री 1008 आदिनाथ दिगम्बर जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव का भव्य आयोजन महामांगलिक कार्यक्रमों के साथ सम्पन्न हुआ।

प्रतिदिन दोनों समय आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजीस्वामी के सी. डी. प्रवचन होते थे। इस अवसर पर जैनदर्शन के तलस्पर्शी विद्वान बाबू जुगलकिशोरजी युगल कोटा के दो प्रवचन तथा विद्यावारिधि डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के प्रतिदिन पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव पर प्रासंगिक प्रवचनों का लाभ उपस्थित जन सैलाब ने लिया।

आपके अतिरिक्त डॉ. उत्तमचन्दजी सिवनी, पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल, पण्डित पूनमचन्दजी छाबड़ा इन्दौर, पण्डित वीरेन्द्रकुमारजी जैन आगरा, पण्डित प्रदीपकुमारजी झांझरी उज्जैन, पण्डित राजकुमारजी शास्त्री बांसवाड़ा, पण्डित संजीवकुमारजी गोधा जयपुर आदि विद्वानों के प्रवचनों का लाभ भी समाज को प्राप्त हुआ।

पंचकल्याणक की सम्पूर्ण प्रतिष्ठा-विधि बाल ब्र. पण्डित जतीशचन्दजी शास्त्री सनावद के प्रतिष्ठाचार्यत्व एवं निर्देशन में सहयोगी प्रतिष्ठाचार्य पण्डित मधुकरजी जैन जलगाँव, पण्डित अजीतजी शास्त्री अलवर, पण्डित मनीषजी शास्त्री पिडावा, पण्डित सुबोधजी शास्त्री शाहगढ़, पण्डित सुनीलजी 'धवल' भोपाल, पण्डित संदीपजी शास्त्री छतरपुर, पण्डित सुकुमालजी झांझरी, पण्डित मनोजजी शास्त्री, पण्डित बाबूलालजी बांझल आदि विद्वानों ने सम्पन्न कराये।

दिनांक 4 फरवरी को ध्वजारोहण श्री प्रदीपकुमारजी चौधरी परिवार किशनगढ़ द्वारा किया गया। प्रतिष्ठा मण्डप का उद्घाटन श्री निहालचन्दजी जैन ओसवाल जयपुर ने किया।

गिरधरपुरा में नवनिर्मित मुमुक्षु आश्रम के अन्तर्गत 71 फीट उत्तुंग भव्य जिनमंदिर, 51 फीट ऊँचा विशाल मानस्तम्भ, मुनिसुव्रतनाथ टोंक तथा स्वाध्याय भवन का नवनिर्माण श्री पदमचन्दजी प्रेमचन्दजी बजाज कोटा परिवार के सर्वाधिक आर्थिक सहयोग एवं पण्डित रतनचन्दजी शास्त्री कोटा के अथक् प्रयासों से हुआ।

आदिकुमार के माता-पिता बनने का सौभाग्य श्रीमती क्रांति-हुकमचन्दजी जैन भोपाल को प्राप्त हुआ। सौधर्म इन्द्र-इन्द्राणी श्री प्रेमचन्द-सुनीता बजाज कोटा तथा कुबेर इन्द्र-इन्द्राणी श्री प्रकाशचन्द-तारा खटोड थे। महोत्सव के यज्ञनायक श्री विजय-प्रतिभा जैन कोटा थे।

सांस्कृतिक कार्यक्रमों में रामपुरा के सांस्कृतिक मण्डल द्वारा निमित्तोपादान अदालत एवं डी.पी. कौशिक मुजफ्फरनगर द्वारा सेठ सुदर्शन नाटिका की आध्यात्मिक प्रस्तुति की गई।

महोत्सव में सम्पूर्ण देश से पधारे हजारों साधर्मियों ने धर्मलाभ लिया। लगभग 98 हजार 7 सौ रुपये का साहित्य एवं 10,037 घंटो के सी.डी. व ऑडियो कैसिट्स घर-घर पहुँचे।

2. सागर (म.प्र.) : यहाँ नवनिर्मित 108 फीट उत्तुंग शिखरयुक्त श्री महावीरस्वामी दिगम्बर जिनमन्दिर हेतु श्री कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन स्वाध्याय मन्दिर ट्रस्ट के तत्त्वावधान में दिनांक 13 से 19 जनवरी, 2006 तक श्री 1008 पार्श्वनाथ दिगम्बर जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव का आयोजन विविध मांगलिक कार्यक्रमों पूर्वक सानन्द सम्पन्न हुआ।

महोत्सव में आध्यात्मिक सत्पुरुष कानजीस्वामी के सी.डी. प्रवचनों के अतिरिक्त विद्यावारिधि डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव पर प्रासंगिक प्रवचन हुये।

आपके अतिरिक्त पण्डित विमलदादाजी झांझरी उज्जैन, ब्र. सुमतप्रकाशजी खनियांधाना, पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली, पण्डित राजेन्द्रजी जबलपुर, पण्डित शिखरचन्दजी विदिशा, पण्डित राकेशकुमारजी शास्त्री मंगलायतन, पण्डित शांतिकुमारजी पाटील जयपुर आदि विद्वानों के प्रवचनों का लाभ भी समाज को प्राप्त हुआ।

पंचकल्याणक की सम्पूर्ण प्रतिष्ठा-विधि बाल ब्र. पण्डित जतीशचन्दजी शास्त्री सनावद के प्रतिष्ठाचार्यत्व एवं निर्देशन में सहयोगी प्रतिष्ठाचार्य पण्डित शांतिकुमारजी पाटील जयपुर, पण्डित मधुकरजी जैन जलगाँव, पण्डित प्रकाशदादाजी मैनपुरी, पण्डित ऋषभजी छिंदवाड़ा, पण्डित सुबोधजी शाहगढ़, श्री सुनीलजी धवल भोपाल, पण्डित संदीपजी बड़ामलहरा, पण्डित सुकुमालजी झांझरी उज्जैन, पण्डित आशीषजी टीकमगढ़, पण्डित श्रेयांसजी अभाना, पण्डित वीरेन्द्रजी बरा, पण्डित सुदीपजी बरगी, पण्डित दीपेशजी गुढ़ा, पण्डित प्रियंकजी रहली, पण्डित बाबूलालजी बांझल गुना आदि विद्वानों ने सम्पन्न कराये।

जिनमंदिर के प्रथम तल पर विशाल स्वाध्याय भवन का उद्घाटन हुआ तथा द्वितीय तल पर मूलनायक भगवान महावीर के अतिरिक्त वासुपूज्यस्वामी, मल्लिनाथस्वामी, नेमीनाथस्वामी तथा विधिनायक भगवान पार्श्वनाथस्वामी की वीतरागी मनोज्ञ प्रतिमायें तथा समवशरण मन्दिर में श्री पार्श्वनाथस्वामी की चार प्रतिमायें प्रतिष्ठा-विधिपूर्वक विराजमान की गई। साथ ही चार अनुयोगमय रत्नजड़ित जिनवाणी, वेदी में चार पूर्वाचार्यों के चरण, जिनमन्दिर के प्रांगण में चौबीस तीर्थंकरों के 24 स्वर्णकलश तथा समवशरण मन्दिर में 64 चँवरों की स्थापना की गई।

महोत्सव में पार्श्वकुमार के माता-पिता बनने का सौभाग्य श्रीमती सुशीला-महेन्द्रकुमार जैन सागर को प्राप्त हुआ। सौधर्म इन्द्र-इन्द्राणी श्री सुनील-मीना जैन सागर तथा कुबेर इन्द्र-इन्द्राणी श्री दीपक-प्रीति जैन सागर थे। महोत्सव के यज्ञनायक श्री राजेन्द्र-कल्पना जैन रहे।

सांस्कृतिक कार्यक्रमों में जैन युवा फैडरेशन विदिशा मण्डल की प्रस्तुती '**सुकुमाल का वैराग्य**' नाटक सराहनीय रहा तथा मैनपुरी का विशेष पालना आकर्षण का केन्द्र रहा।

इस अवसर पर लगभग 75 हजार रुपये का सत्साहित्य एवं 17 हजार 45 रुपये के 7548 घंटों के सी.डी. व ऑडियो कैसिट्स घर-घर पहुँचे। ●

तारणस्वामी की साधनास्थली निसई में...

वेदी प्रतिष्ठा सम्पन्न

निसई (म.प्र.) : परमपूज्य दिगम्बर मुनिराज तारणस्वामी की साधनास्थली तीर्थक्षेत्र निसईजी में दिनांक 17 से 19 जनवरी, 06 तक तारण समाज का तीन दिवसीय बृहत् आयोजन वेदीप्रतिष्ठा व कलशारोहण पूर्वक सम्पन्न हुआ।

तारण समाज के विशेष आमंत्रण पर पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल, जयपुर के मार्मिक प्रवचनों का लाभ समाज को मिला तथा दिनांक 19 जनवरी को डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल भी समाज के विशेष आग्रह पर सागर पंचकल्याणक से पधारे । यहाँ उनके दो प्रवचनों का लाभ साधर्मियों को प्राप्त हुआ।

इस आयोजन के प्रत्यक्षदर्शी भारिल्ल बन्धुओं के कहे अनुसार ''सम्पूर्ण तारण समाज का अध्यात्मप्रेम अनुकरणीय है। यद्यपि प्राचीन परम्परानुसार उनके अपने चैत्यालयों में मूर्ति स्थापित नहीं होती; परन्तु समाज तीर्थों की वन्दनार्थ जाती है, दिगम्बर मन्दिरों में शुद्धाम्नाय से पूजा करती है, आचार्य कुन्दकुन्द के तथा चार अनुयोगमय जिनवाणी का स्वाध्याय करती है एवं अध्यात्म के प्रति विशेष प्रेम रखती है।''

इस प्रसंग पर श्री कपूरचन्दजी भाईजी द्वारा तारणस्वामी के ग्रन्थों से संकलित **देवपूजा** कृति विद्वानों को भेंट की गई। आपके अतिरिक्त ब्र. बंसतजी व पण्डित पद्मचन्दजी के भी प्रवचन हुये। कार्यक्रम के आयोजक श्री प्रकाशचन्द, महेशचन्द, सुभाषचन्दजी वात्सल्य परिवार खुरई थे।

ज्ञातव्य है की सन् 1965 में पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी एवं बाबूभाई भी यहाँ पधारे थे।

इस अवसर पर श्री तारण-तरण दिगम्बर जैन समाज द्वारा डॉ. भारिल्ल को '**समयसार रत्न**' एवं पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल को '**जिनागम मर्मज्ञ**' की उपाधि से सम्मानित कर गौरवान्वित किया गया। मंच संचालन डॉ. विद्यानन्द जैन ने किया। ●

भोजनालय लोकार्पण एवं छात्रावास शिलान्यास

द्रोणगिरि (छतरपुर-म.प्र.) : श्री गुरुदत्त कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन स्वाध्याय मन्दिर ट्रस्ट, द्रोणगिरि द्वारा निर्माणाधीन **सिद्धायतन** में दिनांक 20 जनवरी, 2006 को महासती चंदनबाला भोजनालय का उद्घाटन डॉ. वासंतीबेन शाह मुम्बई एवं श्री गुरुदत्त छात्रावास का शिलान्यास समारोह श्री पूनमचन्दजी नरेशकुमारजी लुहाड़िया दिल्ली के करकमलों से सम्पन्न हुआ।

इस अवसर पर पण्डित विमलदादाजी झांझरी उज्जैन, पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली, पण्डित राजेन्द्रकुमारजी जबलपुर, ब्र. सुमतप्रकाशजी खनियांधाना, पण्डित राजकुमारजी शास्त्री बांसवाड़ा, पण्डित पीयूषजी शास्त्री जयपुर, पण्डित कोमलचन्दजी जैन टड़ा, ब्र. विमलाबेन आदि विद्वानों का सान्निध्य प्राप्त हुआ।

ध्वजारोहण श्री महीपालजी शाह बांसवाड़ा ने किया तथा विधि-विधान के कार्य पण्डित विरागजी शास्त्री ने सम्पन्न कराये। **ह्न मस्तांई प्रेमचन्द जैन**

तत्त्वार्थसूत्र महामण्डल विधान का आयोजन

जबलपुर (म.प्र.) : यहाँ भगवान महावीरस्वामी दिगम्बर जिनमंदिर की स्थापना के पाँचवी वर्षगांठ के अवसर पर दिनांक 4 से 10 जनवरी, 2006 तक तत्त्वार्थसूत्र महामण्डल विधान का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर प्रतिदिन प्रात: एवं रात्रि में पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली के क्रमबद्धपर्याय पर मार्मिक प्रवचनों के अतिरिक्त दोपहर में ब्र. विमलाबेन, पण्डित सुनीलजी धवल एवं पण्डित नरेन्द्रजी के प्रवचन हुये। विधि-विधान के कार्य एवं रात्रि के सांस्कृतिक कार्यक्रमों में पण्डित विरागजी शास्त्री के अतिरिक्त पण्डित श्रेयांसजी शास्त्री, पण्डित अभिनयजी शास्त्री, पण्डित मनोजजी व पण्डित श्रेणिकजी का विशेष सहयोग रहा।

फैडरेशन के पहल पर इस वर्ष महावीर जयन्ती के अवसर पर डॉ. भारिल्ल द्वारा लिखित **शाकाहार और अहिंसा** पुस्तक की 2500 प्रतियाँ नि:शुल्क वितरित करने का निर्णय लिया गया।

डॉ. वाचस्पति उपाध्याय स्मारक भवन में

जयपुर (राज.) : दिनांक 23 जनवरी को भारतीय विश्वविद्यालय संघ के अध्यक्ष एवं लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, दिल्ली के कुलपति डॉ. वाचस्पति उपाध्याय विश्वविद्यालय द्वारा सिद्धान्त चक्रवर्ती आचार्य विद्यानन्दजी मुनिराज के मंगल सान्निध्य में आयोजित कुन्दकुन्द स्मृति व्याख्यानमाला के अन्तर्गत समयसार ग्रन्थ पर विशेष व्याख्यान हेतु डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल को आमंत्रित करने श्री टोडरमल स्मारक भवन में पधारे।

संस्था की ओर से चल रही विविध गतिविधियों का विस्तृत परिचय प्राप्त करके संस्था द्वारा जैनदर्शन के प्रचार हेतु किये जा रहे कार्यों की उन्होंने मुक्त कंठ से प्रशंसा की।

महाविद्यालय के विद्यार्थियों हेतु भी उनका मार्गदर्शन प्राप्त हुआ; जिसमें उन्होने विद्यार्थियों को विद्या का अर्थ, समय और महाविद्यालय क्षेत्र की महत्ता बताते हुये उसके सदुपयोग की प्रेरणा दी।

इस अवसर पर पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट की ओर से उनका रजत श्रीफल, शॉल, सत्साहित्य एवं प्रशस्ति-पत्र भेंट कर सम्मान किया गया। ●

हार्दिक बधाई

1. श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय के स्नातक एवं प्राचीन भारतीय भाषाओं के मनीषी विद्वान डॉ. सुदीप जैन, दिल्ली को 6 दिसम्बर, 2005 को राष्ट्रपति भवन में आयोजित भव्य समारोह में महामहिम राष्ट्रपति डॉ. ए. पी. जे. अब्दुल कलाम द्वारा **महर्षि बादरायण व्यास** सम्मान से पुरस्कृत किया गया। पुरस्कार में एक लाख की धनराशि, शॉल एवं प्रशस्ति-पत्र समर्पित किया गया।

2. जैनदर्शन के मनीषी विद्वान डॉ. भागचन्दजी भास्कर नागपुर को पाली, प्राकृत में निपुणता तथा शास्त्रीय पाण्डित्य के लिये 6 दिसम्बर ही को राष्ट्रपति डॉ. कलाम ने आजीवन 50 हजार रुपये प्रतिवर्ष की धनराशि व प्रशस्तिपत्र से अभिनन्दन किया।

आप दोनों को वीतराग-विज्ञान परिवार की ओर से हार्दिक बधाई ! **ह्न प्रबन्ध सम्पादक**

वैराग्य समाचार

1. **म्हसरूल–नासिक निवासी** ब्र.रावजी जीवराज शाह का दिनांक १० जनवरी, ०६ को शांत परिणामों से देहावसान हो गया। आप श्री टोडरमल दि. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय जयपुर एवं श्री महावीर ब्रह्मचर्याश्रम जैन गुरुकुल कारंजा के अधिष्ठाता थे। महाराष्ट्र प्रान्त में पाठशाला स्थापन एवं तत्त्वप्रचार–प्रसार में आपका महत्त्वपूर्ण योगदान था। अच्छे स्वाध्यायी एवं समाज सेवक रहे।

2. **पिपलानी–भोपाल निवासी** विदुषी श्रीमती मुन्नीबाई (मनोरमा) जैन धर्मपत्नी श्री गुलाबचन्दजी जैन का 75 वर्ष की आयु में दिनांक 3 जनवरी,06 को आत्मचिंतन करते हुये साम्यभावपूर्वक देहावसान हो गया।

आप पूज्य गुरुदेवश्री की प्रेरणा एवं उनके मंगल सान्निध्य में निर्मित श्री दिगम्बर जैन मंदिर बी.एच.ई.एल. की प्रमुख कार्यकर्ता थी। स्वाध्यायप्रेमी महिला होने के साथ ही मुमुक्षु मण्डल व भोपाल से संचालित गतिविधियों में सदैव सक्रिय रहती थीं। आपके निधन से भोपाल समाज को अपूरणीय क्षति हुई है। आपकी स्मृति में टोडरमल स्मारक ट्रस्ट को 501 रुपये प्राप्त हुये हैं।

3. **भोपाल निवासी** श्रीमती कमलश्रीबाई जैन ध.प. स्व. श्री डालचन्दजी जैन सर्राफ का दिनांक २८ जनवरी, २००६ को ८४ वर्ष की आयु में णमोकार मंत्र का श्रवण करते हुये देहावसान हो गया। आप श्री डालचन्द कमलश्रीबाई दि. जैन सार्वजनिक न्यास भोपाल की संस्थापिका थीं। आपने दो बार ससंघ गुरुदेवश्री कानजीस्वामी एवं पण्डित बाबूभाई मेहता के साथ सम्मेदशिखरजी आदि तीर्थक्षेत्रों की वंदना भी की।

4. **ग्वालियर निवासी** डॉ. अभयप्रकाश जैन का दिनांक २१ जनवरी, ०६ को हृदयाघात के कारण देहावसान हो गया। आप जैनदर्शन के अच्छे विद्वान थे। जैन संस्कृति के संरक्षण में आपका महत्त्वपूर्ण योगदान रहता था। आपके स्वर्गवास से ग्वालियर जैन समाज को अपूरणीय क्षति हुई है।

5. **कारंजा निवासी** श्रीमती धोंडाबाई घोडके का ३१ जनवरी,०६ को देहावसान हो गया है। आप श्री टोडरमल दि. जैन सि.महाविद्यालय के स्नातक पं.आलोकजी शास्त्री की मातुश्री थीं।

उक्त सभी दिवंगत आत्मायें मुक्ति को प्राप्त करें ह्न यही मंगल भावना है।

डॉ. भारिल्ल के आगामी कार्यक्रम

5 मार्च, 2006	**दिल्ली**	**यूनिवर्सिटी**
19 से 21 मार्च, 2006	**जयपुर**	**वि.विद्यालय सेमिनार**
14 से 16 अप्रैल, 2006	**दिल्ली**	**गुरुदेव जयन्ती**
26 से 29 अप्रैल, 2006	**देवलाली**	**गुरुदेव जयन्ती**
09 से 26 मई, 2006	**देवलाली**	**प्रशिक्षण–शिविर**
26 मई से 18 जुलाई, 06	**विदेश**	**धर्मप्रचारार्थ**
23 जुलाई से 1 अगस्त,06	**जयपुर**	**शिक्षण–शिविर**
04 से 09 अगस्त, 2006	**लंदन**	**पंचकल्याणक**
20 से 26 अगस्त, 2006	**मुम्बई**	**श्वेताम्बर पर्यूषण**